अध्याय -1

समस्या परिचय

प्रकृति की सबसे उत्तम रचना के रूप में मनुष्य का उद्भव हुआ | लैंगिक भिन्नता के अलावा बाकि सभी क्षेत्रों में समान होने के बावजूद भी मनुष्य प्रजाति के एक हिस्से को अपनी विकास यात्रा में अनेक व्यवधानों का सामना करना पड़ा | जब वैश्विक स्तर पर एक सभ्य, सुरक्षित एवं शांतिपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की स्थापना कर सकने वाली राजनीतिक व्यस्था की तलाश के लगातार प्रयत्न किये जा रहे थे तब भी मानव जाति के इस पक्ष को केवल लैंगिक कारणों से ही सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था में अपना उचित स्थान नहीं मिल पाया | अतः भावी विकास क्रम में मानव समाज का यह वर्ग लगातार पीछे खिसकता चला गया | और समाज दो अलग-अलग वर्गों में बंटा हुआ नजर आने लगा | जिसमे एक वर्ग प्रभुत्वशाली एवं दूसरा अधीनता को बयां करता है | अर्थात् महिलाओं को अपना अमूल्य जीवन पुरुषों के आधिपत्य में रहते हुये ही व्यतीत करना पड़ा या यों कहें कि "महिलायों को शादी से पहले पिता के द्वारा निर्धारित एवं शादी के बाद पति के द्वारा निर्धारित सीमायों के अन्दर रहते हुये ही अपनी क्षमतायों को विकसित एवं प्रदर्शित करने की छूट दी जाती थी |"[1]

इस तरह महिलाओं को एक निर्देशित जीवन जीना पड़ा | महिलाओं के लिये स्वतंत्रता एवं अधिकारों का क्षेत्र बहुत ही नाममात्र या नहीं के बराबर रहा है | पारिस्थितिकी विकास क्रम एवं शैक्षिक व तकनीकी उन्नत्ति एवं प्रसार के साथ-साथ महिला जागरूकता हेतु जागृति पैदा करने वाले अवसरों की उपलब्धता में भी पर्याप्त वृद्धी हुई | परिणाम स्वरूप बीसवीं शताब्दी के प्राम्भ में कुछ जागरूक महिलाओं, महिला संगठनों, महिला अधिकारों के पक्षधरों, समानता के पैरवीकारों, महिला

अधिकारों में रूची रखने वाले शिक्षाविदों, सिद्धान्तकारों, समर्थकों एवं संस्थाओं ने इस दिशा में लगातार प्रयास किये | जिससे महिलाओं की दयनीय व दर्दनाक वास्तविक स्थिति आम जन के सामने आयी, इससे उनका पिछड़ापन एवं बन्धनों से बंधा जीवन झलक रहा था यही महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधारों, स्वतंत्रता, अधिकारों, समानता एवं मानवीय गरिमा के सम्मान की मांग की दिशा में महत्वपूर्ण आधार बन गये |

वर्तमान में लोकतान्त्रिक शासन प्रणाली के मूल्यों की श्रेष्ठता को वैश्विक स्तर पर मान्यता एवं स्वीकारोक्ति मिलने के बाद स्वतंत्रता व अधिकारों की लगातार बढ़ती मांग ने ही महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों की चाह को बलवित किया है | इस तरह "आज मानव जाति के लिए चिंता का विषय बने सभी राजनीतिक प्रश्नों का सटीक उत्तर खोजने के लिये हमें उस महान यूनानी युग की तरफ मुड़ना होगा जिसमें सुकरात, प्लेटो, एवं अरस्तु का वर्चस्व रहा है | इसके साथ-साथ "हमें उन रचनाओं से भी मदद लेनी होगी जो प्रथम कोटि की हैं, जिनका शाश्वत महत्व है एवं जिनकी उत्कृष्टता सर्वमान्य है | समकालीन महिला अधिकारों की मांग के सन्दर्भ में जिस अमानवीय व गरिमा विरोधी आधार को प्रस्तुत करते हुये उसे मिटाने हेतु कुछ अतिआवश्यक व कठोर कदमो के वास्तविक व प्रभावशाली क्रियान्वन की दुहाई दी जा रही है ऐसी भेदभावपूर्ण एवं आधिपत्यवादी सामाजिक व्यवस्था की जड़ें बहुत ही गहरी हैं |

महिलाओं की सामाजिक स्थिति - इस क्रम में प्राचीन पाश्चात्य विचारधारा के यूनानी विचारक प्लेटो के विचारों देखें तो उन्होंने अपनी शिक्षा पद्धति के माध्यम से मनुष्य के तीन प्रधान गुणों की पहचान विवेक, साहस एवं सयंम के रूप में की | इन्ही गुणों के आधार पर क्रमशः तीन वर्गों का निर्धारण दार्शनिक (शासक), सैनिक व व्यापारी के रूप में किया है | "प्लेटो ने अपने वर्ग निर्धारण में संरक्षक वर्ग (शासक एवं सैनिक) में महिलाओं को भी शामिल करते हुये पुरुषों के समान दर्जा देकर

उनकी योग्यताओं का सम्मान किया है |"[2] लेकिन उन्ही के शिष्य अरस्तू ने विरोधी मत व्यक्त करते हुये कहा की "महिलाएं स्वभाव से ही पुरुषों से हीन होती हैं | अरस्तू ने महिलाओं की संकल्प शक्ति को क्षीण बताते हुये उनकी तुलना दासों से कर डाली और महिलाओं को घर की चारदीवारी के अन्दर सीमित करते हुये कहा की पुरुषों के अधीन रहने में ही उनकी भलाई है |"[3] इस तरह से असमानता को राजनीतिक चिंतन की केंद्रीय समस्या के रूप में इंगित करते हुये इसे ऐसी समस्या बताया है जो कि प्राचीन काल से ही चली आ रही है | हालांकि उन्होंने समानता के मानदंडों को प्रत्येक काल में परिवर्तनशील बताते हुए कई राज्यों में हिंसक घटनाओं व विद्रोह का प्रमुख जनक भी माना है | अतः समानता अपने आप में एक कठिन संकल्पना के रूप में बनी रही है |

जब हम इस दिशा में प्रयत्न करते हुये भारतीय ज्ञान परम्परा के प्रथम चरण की विद्वता का सहारा लेते हुये मानव धर्मशास्त्र के प्रणेता आचार्य मनु के मत को समझते हैं तो, उन्ही के शब्दों में "न स्त्री स्वतन्त्र्यमर्हती" अर्थात् महिला स्वतंत्र रहने योग्य नहीं होती है | "वह स्त्रियों के उन दुर्गुणों की तरफ इशारा करते हैं जो उन्हें ब्रह्मा से मिले हुए हैं | इन्ही दुर्गुणों के कारण स्त्रियों को दी गई स्वतंत्रता उन्हें बड़ी आसानी से व्याभिचार जैसे बुराइयों में लिप्त कर सकती है |" अतः परिवार में स्त्रियों का स्वतंत्र नहीं बल्कि अधीन रहना ही उचित बताते हुए इन बुराईयों से बचे रहने की सलाह दी है | साथ ही "स्त्रियों के सम्पूर्ण जीवन को अधीनता के क्रम में तीन कालों में वर्गीकृत किया है, प्रथम - बाल्यकाल में पिता की अधीनता, द्वितीय - युवावस्था में अपने पति के नियंत्रण में एवं तृतीय – वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में |"[4] अर्थात् महिलाएं जीवन के किसी भी चरण में स्वतंत्रता की चाह नहीं कर सकती उन्हें अपने तीनो कालों में निर्धारित आधिपत्य के अधीन रहते हुए ही परिवार में अपने कर्तव्यों को पूरा करने का दायित्व सौंपा गया था | हालाँकि मनु ने "पारिवारिक जीवन में महिलाओं कि गारिमा व प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिये उचित सम्मान,

उपहार व आभूषण देने की पैरवी की | जिससे पारिवारिक जीवन खुशहाल व फलदाई बना रहे | इस सम्बन्ध में मनु ने कहा है कि जिस कुल में महिलाओं का सम्मान होता है उस कुल में ही देवताओं का वास होता है |" लेकिन महिलाओं के सम्बन्ध में ऐसी उद्दारता पूर्ण भावना केवल पारिवारिक कलह से बचने एवं पुरुष सदस्यों की खुशहाली के लिये ही दी गई नज़र आती है | इसमें महिला स्वतंत्रता या पुरुषों के समक्ष समानता का भाव नहीं जान पड़ता है |

एक ऐसे विद्वान जिसे अपनी अक्षुण्य इच्छा शक्ति एवं दृढ़ निश्चियी के रूप में ख्यातिप्राप्त है, अर्थात् "कौटिल्य ने अपनी प्रसिद्ध रचना अर्थशास्त्र में मनु के विपरीत महिलाओं को समाज के एक सामान्य सदस्य के रूप में मान्यता प्रदान करते हुए पुरुषों के समान अधिकारों का समर्थन किया है | साथ ही महिलाओं के साथ किसी भी तरह के भेदभाव को अनुचित ठहराते हुए समान न्यायिक संरक्षण दिए जाने की बात कही है | इसके आलावा सम्पत्ति के अधिकार तक भी महिलाओं की पहुँच बनाये रखने का समर्थन किया है | इस तरह कौटिल्य ने महिलाओं के प्रति भेदभावकारी नीतिओं एवं उनके दौयम दर्जे को बनाये रखने वाले उस अभेद किले को ध्वस्त करने का एक प्रयास जरूर किया | लेकिन यह उतना आसान नहीं था क्योंकि समाज व्यवस्था पूरी तरह पुरुष आधिपत्यवादी रंग में रंगी हुई थी | लेकिन सबसे बड़ी बात यह है की स्वयं कौटिल्य ने ही अपने प्रहारों की दिशा में परिवर्तन करते हुए अपनी पीठ घुमा ली | अर्थात् जब "कौटिल्य राजा द्वारा अपने मंत्रिओं के साथ लगातार मंत्रणा करने के महत्व एवं गोपनीयता की बात करता है तब महिलाओं को मंत्रणा स्थल से दूर रखने की बात करता है | इसके पीछे उनका तर्क यह है की महिलाएं गूढ़ बातों को छिपाकर नहीं रख सकती हैं |"[5] इस तरह कौटिल्य ने अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं को प्रशासनिक क्रियाकलापों से दूर करते हुए उनकी दुर्बलता की और इशारा किया है | जो कि महिलाओं को पुरुषों के समक्ष निम्न कोटि में रखते हुये उनके साथ भेदभाव को उचित ठहराता है | इस तरह महिलाओं को घर की

चारदिवारी तक सीमित रखते हुये संतानोत्पत्ती एवं मनोरंजन के साधन इत्यादी शब्दों से अलंकृत किया गया और अनेक उत्पीड़नकारी एवं अमानवीय रुढ़ियों का शिकार बनकर, लोकतांत्रिक मूल्यों से वंचित रहना पड़ा |

सामाजिक व्यवस्था एवं विकास के क्रम में महिलाओं की स्थिति दयनीय रही हैं। प्राचीन काल से ही न केवल भारतीय विचारकों मनु, शुक्र, कौटिल्य ने बल्कि यूनानी विचारक अरस्तु ने भी महिलाओं को अल्प विवेकी कहते हुये दूसरे पायदान पर रखा है जिसका मुख्य कारण पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था रही है | पितृसत्ता की सटीक एवं पूर्ण परिभाषा देते हुये गर्डा लर्नर ने कहा "कि यह बच्चों व महिलाओं पर परिवार में पुरुषों के वर्चस्व की अभिव्यक्ति है | साथ ही सामन्य एवं संस्थागत रूप में पितृसत्ता, महिलाओं पर पुरुषों के सामाजिक वर्चस्व का विस्तार है |"[6] अर्थात् महिलाएं पूर्ण रूप से शक्ति हीन हैं या यो कहें कि प्रभाव, अधिकार एवं संशाधनों से पूरी तरह शक्ति हीन हैं | इस व्यस्था में यह विचारधारा बनी रहती है "कि पुरुष महिलाओं से श्रेष्ठ हैं, इसीलिए महिलाओं पर पुरुषों का आधिपत्य है एवं बना भी रहना चाहिये और पुरुषों की संपत्ति के रूप में महिलाओं को मान्यता दी गई है |"[7] भारत में पितृसत्तात्मक समाज व्यस्था में महिला की भूमिका एक आदर्श में माँ, पत्नी एवं पुत्री के रूप में निर्धारित की गई है | साथ ही नारी की भूमिका का केंद्र माँ एवं पत्नी के रूप में माना गया है | भारतीय समाज में महिलाओं की भूमिका को सर्वोतम ढंग से व्यक्त करते हुये एक लेखक ने कुछ पंक्तिओं के माध्यम से कहा की "नारी पति के लिये माँ की तरह खाना बनाने व भोजन परोसने वाली, एक सचिव की भांति कार्यों में सहायता देने वाली, चरणों की दासी, शैय्या पर प्रेयसी की भांति, एवं वसुन्धरा की भांति सहनशील होनी चाहिये |"[8]

उन्नसवीं सदी में पहली बार नारी की स्थिति पर मंथन एवं समाज सुधार आन्दोलन शुरू हुये | आधुनिक युग में महिलाओं को समानता दिलवाने की दिशा में

सर्वप्रथम प्रयास जे.एस. मिल ने 1869 में अपनी प्रसिद्ध कृति *"Subjection of Woman"* के माध्यम से किया | उनके अनुसार महिलाओं को चिरकाल से ही पुरुषों के अधीन रखा गया फिर चाहे इसका आधार क़ानूनी हो या परंपरागत केवल उपयोगिता के आधार पर इसे वैध नहीं कहा जा सकता | जीववैज्ञानिक अंतर के अधार पर महिलाओं को मताधिकार, उच्च पदों एवं उन्नति के अवसरों से वंचित नहीं किया जा सकता है | अतः मिल ने पुरूषों के आधिपत्य से महिला मुक्ति का समर्थन किया | साथ ही महिला स्वतंत्रता को आत्म विकास की आवश्यकता बताते हुये अपनी रचना *"Consideration on Representative Government"* में महिलाओं को मताधिकार प्रदान किये जाने की जोरदार पैरवी की है | मिल ने कहा कि "लोकतंत्र सब लोगों का और लोगों द्वारा ही समान प्रतिनिधित्वपूर्ण शासन है आमतौर पर लोकतंत्र को जो कुछ भी समझा जाता है और आज तक व्यव्हार में लाया गया है, वह प्रतिनिधियों के बहुमत मात्र द्वारा समस्त जनता का शासन है |"[9] मिल ने यह तो स्वीकार कर लिया की "प्रतिनिधि शासन में बहुमत को शासन करना होता है साथ ही अल्पसंख्यकों को इसका पालन भी करना चाहिये लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि अल्पसंख्यकों को प्रतिनिधित्व ही नहीं प्रदान किया जाये | लेकिन मिल के प्रयासों के बाद भी व्यवहारिक स्तर पर विशेष बदलाव नहीं हो पाये | यह इन तथ्यों से स्पष्ट झलक रहा है कि विश्व की प्रमुख लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थायें ही महिलाओं को मताधिकार देने में भी हिचक मानती रही |

इस तरह जब लोकतान्त्रिक शासन प्रणालियों में अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अधिकार ही महिलाओं को नहीं हो तो शासन में उनका प्रतिनिधित्व व हितों की हिमायत असंभव है | यानि की "प्रतिनिधि लोकतंत्र में मालिक अर्थात् जनता ही अपने प्रतिनिधितियों का निर्देशन करते हुये उन्हें प्राधिकार प्रदान करती है, ताकि लोगों के अधिकतम हितों की पूर्ति हो सके | इस तरह बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में

जब महिला संगठनों का आविर्भाव हुआ तब पूरे विश्व में महिला अधिकारों की मजबूती के साथ मांग लगातार की गई |

यहाँ यह बात महत्वपूर्ण है कि जब वैश्विक स्तर पर "अमेरिका ने 1776 के स्वतंत्रता के घोषणापत्र में स्वीकार किया कि, सभी इन्सान बराबर हैं, और उनके कुछ अदेय अधिकार भी हैं, जिनकी प्राप्ति के लिये सरकार की स्थापना की गई, जो कि शासितों की स्वीकृति से ही संचालित होगी | और इन आदर्शों की पूर्ति नहीं होने पर शासितों को इसमें परिवर्तन करने या भंग करने का अधिकार भी होगा |" इस समय भी अमेरिका में महिला अधिकारों की अनदेखी कर दी गई | लेकिन अंततः महिला मताधिकारों का शुभारम्भ भी अमेरिका ने ही - 1919 में किया | तत्पश्चात ब्रिटेन ने -1928 में, फ्रांस ने -1945 तथा भारत ने - 1947 में आजादी के बाद बनाये संविधान के द्वारा एवं स्विट्जरलैण्ड ने तो 1971 में महिलाओं को समानता का दर्जा दिया | और कुवैत में आज भी महिला मताधिकार की पूर्ण व्यस्था नहीं है |" यह बात महत्वपूर्ण है की पराधीनता के दौर में ही हमने लोकतांत्रिक मूल्यों के महत्व को बखूबी समझ लिया था, अतः आजादी के साथ-साथ ही निर्मित संविधान में इन लोकतांत्रिक मूल्यों की भावना को स्थापित करने के प्रयास व सुधारों की पर्याप्त गुजांइश भी बनाये रखी | अतः जब हम लोकतंत्र को एक शासन प्रणाली के रूप में समझते हैं तो ''यह एक पंक्ति में खड़े अन्तिम व्यक्ति को शामिल करते हुये आमजन, जनसाधारण या जनता का शासन हैं जैसा की लिकंन ने बताया है |"[10]

जान लॉक ने 1688 की गौरवमयी क्रान्ति से मनुष्य के कुछ अधिकारों को प्राकृतिक मानते हुये सरकार को इनकी रक्षा की जिम्मेदारी सौंपी | वहीं निगरानी का अधिकार भी जनता को दिया है जिससे इन प्राकृतिक अधिकारों (जीवन, स्वतंत्रता एवं सम्पत्ति) में किसी प्रकार की **कटौती** न की जा सके | बाद में अमेरीकी व

फ्रांसीसी क्रान्ति के समय सब मनुष्यों को जन्म से ही स्वतंत्र व समान होने का मुद्दा प्रभावी हुआ जिससे समान नागरिकता की भावना को बल मिला | स्वतंत्रता एक ऐसी दशा व गुण है जो कि मानवीय विकास के लिए आवश्यक हैं, अतः सभी को समान रूप में मिलनी चाहिए | अर्थात् आवश्यक प्रतिबधों को स्वीकार किया जा सकता है | जिससे की किसी एक की स्वतंत्रता, स्वच्छन्दता का रूप धारण करके दूसरे की स्वतंत्रता को खतरा पैदा ना कर सके |

समानता की संकल्पना आधुनिक युग की देन है | यह फ्रांसीसी क्रान्ति के मुख्य आदर्शों में से ही एक है | "1789 के फ़्रांसिसी घोषणापत्र में कहा गया की मनुष्य अपने अधिकारों में जन्म से स्वतंत्र व समान हैं और जीवन भर ऐसे ही बने रहेंगें |"[11] यह ऐसे परिवर्तन की मांग करती है जो अनुचित विषमताओं को बनाये हुये है | "रूसो ने "*A Discourses on the origin of inequality*" परम्परागत एवं प्राकृतिक दो तरह की विषमताओं में से परम्परागत को अतार्किक आधार पर निर्मित मानते हुये समाप्त करने की बात की है | जबकि वर्तमान में विज्ञान के विकास ने कुछ प्राकृतिक विषमताओं के निदान की राह भी आसान बना डाली है | समानता समान लोगों के साथ समान बर्ताव की मांग करती है, साथ ही इसमें भेदभाव के तर्क-संगत आधार के साथ-साथ कुछ कमजोर तबकों को छूट देने का समर्थन भी किया जाता रहा है |"*12*

लास्की के अनुसार "समानता उन भेदभावों को मिटाने की मांग करती है, जो अरस्तु ने दासों के साथ, हिटलर द्वारा यहुदियों के साथ एवं कैथोलिकों (रोमन) के साथ जान लॉक ने किया था |"[13] रूसो ने समाज द्वारा सभी नागरिकों को कानूनी

समानता देने पर बल दिया है तो वहीं जे.आर. ल्युक्स ने *"Principles of Politics"* में कानून के समान बर्ताव की बजाय कानून तक सबकी समान पहुँच के साथ-साथ केवल प्रासंगिक बातों को ही विचारणीय माना है | डी.डी. रफील ने "*Problem of political Philosophy"* में राजनीतिक समानता की मांग के सम्बंध में एक व्यक्ति एक मत, भय या पक्षपात रहित मतदान व संघ निर्माण का समर्थन करते हुये फ्रांसीसी क्रान्ति के समय राजनीतिक विशेषाधिकारों को समानता के विरूद्ध कहा |

अलेक्सी द टॉकवीले ने *'Democracy in America'* में "राजनीतिक अधिकारों को क्रान्ति का पहला दौर बताकर दूसरे दौर सामाजिक आर्थिक क्रान्ति की भविष्यवाणी की | उन्होंने कहा कानूनी व राजनीतिक समानता औपचारिक रूप में भेदभाव की मनाही के साथ उदारवाद के प्रारम्भिक काल में उत्पन्न हुआ विचार है | जबकि सामाजिक व आर्थिक समानता तात्विक रूप में पूंजीवाद की खामियों से उत्पन्न विषमताओं में कमी लाने हेतु तर्कसंगत विचार था | इसी क्रम में ही आधुनिक कल्याणकारी राज्य की स्थापना की मांग बढ़ने लगी |"[14]

भारत में लोकतंत्र का विकास, विस्तार एवं महिलायें - भारत में आजादी से पहले ही पराधीनता के दौर में शासन प्रणाली के रूप में लोकतंत्र एवं लोकतांत्रिक मूल्यों के बारे में एक स्पष्ट एवं गहन अनुभव प्राप्त नेतृत्व उभर चुका था | इसी नेतृत्व के बीच से चुनी गई संविधान सभा के द्वारा भारत के संविधान का निर्माण किया गया | जिसमें संतुलित व आम सहमति वाले माहौल के द्वारा सम्पूर्ण भारत की विविधताओं में सांमजस्य स्थापित करने में सफलता प्राप्त की गई एवं लगभग सभी वर्गों को विकास यात्रा में शामिल होने के उचित अवसर व स्थान भी दिये गये, जिनका संविधान के तीसरे भाग में मूल अधिकारों एवं भाग चार में नीति निर्देशक तत्वों के साथ-साथ अन्य भागों में भी विस्तृत वर्णन किया गया है |

इन सभी विशेषताओं को भारतीय संविधान की प्रस्तावना में बड़े आकर्षक व प्रवाहमयी ढंग से वर्णित शब्दों के माध्यम से महसूस किया जा सकता है, जिनकी तारीफ किये बिना बार्कर जैसे विद्वान् खुद को रोक नहीं पाए | "मुझे गर्व है की भारत के लोगों ने अपने स्वतंत्र जीवन की शुरुआत में उन राजनीतिक सिद्धांतों को स्वीकार किया है जिनको हम पश्चिमी मानते हैं लेकिन वो पश्चिम तक ही सीमित नहीं हैं |"[15] अर्थात् भारत के लोगों द्वारा ही भारत को एक ऐसे प्रभुत्व-सम्पन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य की बात कही हैं जिसमें सभी नागरिकों को न्याय, स्वतंत्रता व समानता प्रदान करते हुये बंधुता बढ़ाने के प्रति वचनबद्धता शामिल है | लेकिन फिर भी व्यवहारिक धरातल पर कुछ विषमतायें अभी भी बनी हुई है | जो कि उन विशिष्ट वर्गों के प्रति अन्याय को दर्शाती है जो मुख्य धारा से पिछड़ गये है | इन्ही में से एक है राजनीति में महिला प्रतिनिधित्व | संवैधानिक समानता के बावजूद भी आधी-आबादी (महिलाओं) का राजनीति में सीमित संख्या में पहुँच पाना एक समस्या के रूप में लोकतांत्रिक भावनाओं को ठेस पहुचाँता है |

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हुये प्रथम आम चुनाव से अब तक भारत की केन्द्रीय विधायिका में महिला प्रतिनिधियों की संख्या इसे दर्शाती है | लोकसभा चुनाव 1977 में महिला प्रतिनिधियों की संख्या 19 थी | यह कुल संख्या का 3.50 प्रतिशत रही है और अब तक की न्यूनतम स्थिति भी है | वहीं यदि अधिकतम की बात करे तो वर्तमान में 16 वीं लोकसभा चुनाव में कुल 66 सदस्य निर्वाचित हुई जो की कुल संख्या का 12.15 प्रतिशत पर ही पहुंच पाई | और राज्यों में भी लगभग यही स्थति बनी रही है |

अतः इस क्रम में महिलाओं की तरफ से समानता की मांग करना तार्किक ही प्रतीत होता है। हालाँकि भारतीय राजनीति में लगभग सभी प्रमुख दलों ने कागजी

तौर पर एवं चुनावी वायदों में महिलाओं को आरक्षण देने की बात की है लेकिन व्यवहार में कुछ अलग ही नतीजे रहें हैं | इसके प्रमाण साफ नजर आते हैं कि “1975 को महिला वर्ष एवं 1975-85 को महिला दशक की मान्यता मिलने के बावजूद भी 1977 में लोकसभा में महिला नेतृत्व अपने निम्नतर स्तर पर पहुँच गया |”[16] लेकिन महिला अधिकारों के प्रति सचेत कुछ अग्रणी महिला संगठन जैसे - सेवा, मनुषि, विमोचना एवं जागरूक महिलायें वैधानिक अंगों में महिला आरक्षण की पक्षधर रही हैं | इस भेदभाव को हम स्वामी विवेकानंद के शब्दों में समझ सकते हैं “ महिलाओं की स्थिति में सुधार किये बिना हम अपने कल्याण की कल्पना नहीं कर सकते हैं क्योंकि यह तो एक पंख के पक्षी के उड़ान भरने के समान परिस्थिति को दर्शाता है |”[17] इसी क्रम में कमजोर, दबे, कुचले व पिछड़े वर्गों के साथ महिलाओं को भी निर्णय प्रक्रिया में शामिल करने के लिए 73 वें एवं 74 वें संवैधानिक संशोधन के माध्यम से राजनीति के प्रवेश द्वार इन वर्गों के लिये खोल दिए एवं इनकी उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया |

पंचायती राज एवं महिला - भारतीय संविधान में पंचायतों की स्थापना 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम से की गई | लेकिन स्थानीय स्वशासन की जड़ें आजादी से पहले भी जमी रही हैं जो की स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान के कार्यक्रमों में भी देखी जा सकती है | “इनमें श्री निकेतन, अगनवाड़ी सेवाग्राम, मार्तडंम ग्राम विकास परियोजना, गुडगाँव प्रयोग, बड़ोदा सामुदायिक विकास, फिरका डवलपमेंट, एवं ईटावा पायलेट प्रोजेक्ट आदि के माध्यम से किये गए प्रयास प्रमुख रहे हैं |”[18]

स्वतंत्र भारत में 1952 का सामुदायिक विकास कार्यक्रम व 1953 के विस्तार सेवा अधिनियम की समीक्षा हेतु गठित बलंवत राय मेहता समिति की अनुशंसाओं के आधार पर 2 अक्टूबर 1959 को नागौर (राजस्थान) से पंचायती राज का शुभारम्भ नेहरू के हाथों से हुआ था | जिसमें त्रिस्तरीय पंचायती राज की स्थापना हुई लेकिन संसाधनों व राजनीतिक इच्छा शक्ति के अभाव में यह योजना पथ से विचलित हो गई | इस सन्दर्भ में सुधारों हेतु बनी 1977 की अशोक मेहता समिति की सिफारिशें लागू नहीं होने के कारण यह योजना और भी कमजोर पड़ गई | और अन्ततः "लक्ष्मी मल सिंघवी समिति की सिफारिशों के आधार पर पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा देने के प्रयत्न पहले राजीव गाँधी व वी.पी. सिंह ने भी किये लेकिन सफलता पी.वी. नरसिम्हा राव सरकार को 73 वे संविधान संशोधन अधिनियम-1992 के रूप में मिल पाई | इस तरह 24 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति से स्वीकृति मिलते ही यह संशोधन पूरे देश में लागू हो गया |"[19]

अब सभी राज्यों को भी इस संशोधन की भावनाओं के अनुरूप ही एक वर्ष की अवधि के भीतर अपने नवीन पंचायती राज अधिनियम की स्थापना करनी पड़ी | इस अधिनियम में मुख्यतया पिछडे हुये समूहों को मुख्यधारा में शामिल करने व लोकतांत्रिक प्रक्रिया में आमजन की भागीदारी के अवसर उपलब्ध करा अनुसूचित जाति एवं जनजाति को अपनी संख्या के अनुपात में तो महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण उपलब्ध करवा कर समानता को हासिल करने के संकेत भी दिये | वर्तमान में और भी अधिक सकारात्मक संकेत तब मिले जब राजस्थान सहित कुछ राज्यों ने महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत पद आरक्षित कर पुरुषो के समान दर्जा दे दिया गया यानि कि निर्वाचित प्रतिनिधियों के मामले में तो महिलायें पुरुषों से भी एक कदम आगे निकल गयी हैं | लेकिन मुद्दा सिर्फ आरक्षण या निर्वाचन का नहीं बजाय इसके

वास्तविक भूमिका निर्वहन एवं प्रभावशीलता का है | जो कि इस अध्ययन के केंद्रीय मुद्दे के रूप में लिया गया है |

साहित्य समीक्षा - महिला आरक्षण, महिलाओं की पंचायतों में भागीदारी, समस्याएँ एवं उनके समाधान, महिला सशक्तिकरण पर पहले हो चुके शोध कार्यों एवं लेखन ने अपने महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किए है जिससे पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता के बारे में समझ हासिल हुई है | जिनकी इस अध्ययन में सहायता ली गई है, उन्ही में से कुछ का वर्णन यहाँ किया गया है |

महिपाल (2004)"[20] ने भारत में पंचायतीराज के समक्ष चुनौतियों का वर्णन करते हुये ग्रामीण समाज के दबे-कुचले हुये वर्गों में आ रही जागृति के संकेत दिये है | कि अब उत्पीड़ित वर्ग अपने अपमान को समझने लगा हैं एवं पंचायत चुनावों में बढ़-चढ़ कर भाग लेने लगा है | इसी क्रम में कुछ ऐसी महिलाओं के उदाहरण दिये हैं | जो गैर-सुरक्षित सीटों से जीतकर आई हैं | साथ ही कुछ बाधाओं के उपरांत आने वाले तीन या चार चुनावों के बाद के नेतृत्व को वास्तविक स्वायत शासन की स्थापना में सक्षम बताया है |

नीरा देसाई एवं ऊषा ठक्कर (2009)"[21] ने बदलते आर्थिक राजनीतिक परिदृश्य में उन मूल्यों के सन्दर्भ में महिलाओं को समानता दिलाने के प्रयास किये हैं, जो असमानता को वैधानिकता प्रदान करते हैं | आर्थिक व शैक्षिक प्रगति के बावजूद लैंगिक अत्याचार एवं भेदभाव के मुद्दों एवं समाज द्वारा सुधार के लिए किये गये प्रयासों की तरफ ध्यानाकर्षण किया है | इसके साथ ही नारी जीवन को प्रभावित करने वाले मुद्दों के प्रति गंभीरता की कमी को मानवता की उपलब्धियों पर पानी फेर देने वाला बताया हैं |

बैजनाथ सिंह (2009)"[22] ने ग्रामीण विकास हेतु आरम्भिक काल में विशेषज्ञों व कार्यकर्ताओं द्वारा किये गये प्रयासों की प्रशंसा की है | लेकिन उत्तरोतर कल में घटती राजनीतिक ईच्छा-शक्ति व बढते शिष्टाचार रूपी भ्रष्टाचार की परते उखाड़ी हैं जिन्होंने राजीव गांधी के काल में हुये प्रयासों का दम घोट दिया | अतः उन्होंने कहा कि सत्ता प्राप्त करने हेतु गांवों की भोली-भाली जनता को झूठे प्रलोभन व भ्रम से बचाकर, उनमे स्वावलम्बन, स्वाभिमान, स्वार्थरहित कार्यकुशलता को बढ़ावा देना चाहिये | इसके लिए पंचायत सदस्यों व सहकारी समितिओं को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जावे | परिवार कल्याण कार्यक्रमों व विद्यालयों के माध्यम से निराशा, दुखः व कुण्ठा को दूर करने की कोशिश होनी चाहिये हैं।

प्रदीप कुमार पाण्डेय (2005)"[23] ने बताया कि कैसे पूंजीवाद के दोष, साम्यवाद की निराशा विज्ञान का विध्वंसक रूप एवं विश्व में अभाव, अन्याय, अशिक्षा व शोषण के विरूद्ध हुई क्रान्तियों की विफलता ने नये शोषण, अपमान व राक्षसी प्रवृति के रक्त रंजित बीज बो दिये हैं | जो कि मानवता को लगातार सताने लग रहे हैं | अतः गांधीजी के सामाजिक व आर्थिक विचारों के क्रियान्वन के माध्यम से ही महिलाओं व पिछड़े वर्गों का उद्धार संभव बताया है | जो की मानवता को स्वस्थ, सभ्य, शोषण मुक्त, सद्भावी सम्पन्नता दे सकता है | वह है ग्राम स्वराज, जिसमें सभी का समान महत्व होगा एवं विकास के अवसर भी समान रूप से उपलब्ध होंगें |

अशोक शर्मा (2011)"[24] ने भारत में पंचायती राज के इतिहास का वर्णन करते हुये आजादी से पहले एवं वर्तमान में पंचायती राज व्यवस्था का विवेचन किया है | पंचायती राज में महिलाओं की भागीदारी का भी वर्णन किया है | साथ ही

महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि की तस्वीर भी दिखलाई है।

रामप्रसाद व्यास, मनोरमा उपाध्याय, उषा पुरोहित (2009)"[25] ने पंचायती राज में महिलाओं की भूमिका एवं महिलाओं के समक्ष समस्याओं की पहचान करते हुये सांस्कृतिक घटकों के निर्माण एवं विकास तथा राजनीतिक जीवन में नारी सहभागिता के वास्तविक स्थिति की पहचान करने के **प्रयतन** किये गए हैं | राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्रों में हो रहे परिवर्तनों में आम महिलाओं की स्थिति को प्रस्तुत किया है |

निंरजन मिश्र, (2006)"[26] ने ग्राम पंचायत अध्यक्षों हेतु महिलाओं के लिए आरक्षित एक तिहाई पदों की वास्तविक स्थिति का अध्ययन किया गया है | इसमें वर्तमान में महिलाओं की स्थिति में हुये सुधारों को ढूंढते हुये उन्हें दर्शाने का प्रयास किया गया है |

आशा कौशिक, (2004)"[27] ने महिला सशक्तिकरण के कई निहितार्थ मानकर विषय को चार भागों में बाँटा गया है | पहले भाग में सशक्तिकरण के वैचारिक आयामों की चर्चा की है | दुसरे में सामाजिक, सांस्कृतिक, आधार की | तीसरे भाग महिलाओं की वैधानिक व राजनीतिक मांगों एवं प्रयासों को दर्शाता है | चर्तुथ हिस्से सक्रिय महिला आन्दोलनों के साथ दुसरे किस्म के आन्दोलनों से परिचय करवाता है, जो महिला सशक्तिकरण में सहयोगी रहे हैं | इसमें महिलाओं को सशक्त स्तर प्रदान करने वाले प्रयासों एवं उनकी प्रासंगिकता का भी विश्लेषण किया है |

रोमी शर्मा, (2004)"[28] ने बताया की पंचायती राज में कार्यरत महिला प्रतिनिधिओं के समक्ष अनेक तरह की कठिनाई एवं चुनौतियां होती हैं, विशेषतया

ग्रामीण समाज में जहाँ परम्परागत सामाजिक संरचना व पुरूष प्रधानता के कारण पंचायतों में महिलाओं की भूमिका कठपुतली के समतुल्य रह जाती है | लेकिन कुछ जागरुक एवं शिक्षित महिला प्रतिनिधि इन सब समस्याओं को दूर कर अपनी भूमिका बखूबी निभा रही हैं | वे महिला सशक्तिकरण हेतु भी प्रभावी प्रयास कर सकती है |

आरपी. जोशी, रूपा मंगलानी, (1998)"[29] ने पंचायती राज के अतीत, वर्तमान व भविष्य के साथ इसके आर्थिक, राजनीतिक, एवं सामाजिक मुद्दों का विश्लेषण किया है | साथ ही पंचायती राज व्यवस्था के सैद्धांतिक व वैचारिक पक्षों का भी विवेचन किया गया है | पंचायतों की वास्तविक वित्तीय एवं प्रशासनिक शक्तिओं एवं समस्याओं की पहचान करते हुये ऐसी सिफारिशें की गई हैं जो सुधारों को संभव कर सकती हैं | इन्होने राजस्थान पंचायती राज व्यवस्था का भी व्यवहारिक अध्ययन एवं विश्लेषण करने का प्रयास किया है | 73 वें संशोंधन अधिनियम के व्यवहारिक एवं सैद्दांतिक पक्षों की समीक्षा की है |

राजनीति में महिलाओं की समान भागीदारी के समक्ष चुनौतियाँ -

राजनीति में महिलाओं के उत्थान, भागीदारी या सशक्तिकरण के लिये उन्हें मुख्यधारा में शामिल तो कर लिया है | परन्तु महिलाओं को कई तरह के व्यवधानों का सामना करना पड़ रहा है | जो कि पंचायतीराज संस्थाओं में उनकी कार्य शैली एवं पहलकदमी को लगातार प्रभावित कर रहा है | यह अब तक हुये अध्ययनों से प्राप्त निष्कर्षों के रूप में हमें मालूम होता है |

इसमें सबसे पहले पितृसतात्मक समाज व्यवस्था की प्रभावशीलता एवं हस्तक्षेप है | जो कि हर कदम पर महिलाओं को अधीन रहते हुये अपनी भूमिका निभाने को बाध्य करता है | दूसरी वह "सामाजिक रूढियों एवं रीति-रिवाज हैं जो

महिलों को एक निश्चित दायरे में रहते हुये ही अपने सीमित अधिकार क्षेत्र का आभास कराती रहती हैं | तथा उन्हे घरेलु व पारिवारिक जिम्मेदारियों से इस कदर बांध देते हैं कि उनसे मुक्ति की कोशिश उनके लिये शारीरिक एवं मानसिक दोनो ही रूप से दुखद व हानिप्रद हो सकती है | तीसरा शैक्षिक पिछड़ापन एवं सामाजिक कार्य कलापों से अनभिज्ञता भी उनको पुरुषों की तुलना में कमतर साबित करने हेतु एक सशक्त अस्त्र के रूप में पुरुषों द्वारा काम में लिया जाता है |"[30] चौथा राजनीतिक समझ एवं जागरूकता का अभाव एवं अनुभवहीनता भी उन्हें परिवार में विशेष रूप से पुरुषों पर निर्भर बना देती है | पांचवी महिलाओं की आर्थिक स्थिति एवं संपत्ति के अधिकार की व्यवहारिक व्यवस्था भी उन्हें अक्षमता एवं निर्भरता के गहनों से सजाकर रखती जो कि समाज में उनकी शोभा के मानदंड माने जाते हैं |

इसके आलावा धनबल, बाहुबल एवं लगातार बढ़ती भ्रष्टाचारी गतिविधियों भी महिलाओं को कई तरह से मजबूर बना देती हैं | और सबसे बड़ी महिलाओं की क्षमताओं एवं निर्णयों के प्रति समाज की नकारात्मक सोच जो उनके हर कदम को संकीर्ण दृष्टि से निहारते हुये मधुर मुस्कान वाले ठहाकों में ऐसे उड़ाते हैं जैसे हुक्के के मारे हुये कस का धुआं |

शोध प्रारूप -

एक शोध की सफलता को सुनिश्चित करने के लिये विषय से सम्बंधित योजनाबद्ध शोध प्ररचना का निर्माण अति आवश्यक है, ताकि उपयुक्त विधियों के माध्यम से आवश्यक तथ्यों की प्राप्ति व विश्लेषण संभव हो सके | प्रस्तुत अध्ययन अलवर जिले के सन्दर्भ में महिला नेतृत्व की वास्तविक स्थिति व उनके समक्ष उपस्थित चुनौतियों पर केन्द्रित है | यह अध्ययन विवरणात्मक के साथ-साथ विश्लेषणात्मक प्रवृति का रहेगा जिसमे अवलोकन के साथ–साथ अनुभवमूलक अध्ययन पद्धति को अपनाया गया है | इसमें प्राथमिक तथ्यों की प्रमुख भूमिका रही

है परन्तु द्वितीयक स्त्रोंतों की सहायता लेकर उपयुक्त आधार सामग्री के संकलन, वर्गीकरण, विश्लेषण व सामान्यीकरण को सुनिश्चित एवं अध्ययन को अधिक प्रासंगिक, उत्पादक एवं प्रभावशाली बनाने के प्रयास रहे हैं |

प्राथमिक तथ्य – इसमें स्वनिर्मित व अनुशंसित अनुसूची पर आधारित क्षेत्र अध्ययन द्वारा अलवर जिले की पंचायती राज संस्थाओं में कार्यरत महिला प्रतिनिधियों के साथ अनौपचारिक साक्षात्कार एवं आपसी वार्तालाप में सटीक व सक्रिय अवलोकन के माध्यम से गहन सूचनाओं को प्राप्त करने के प्रयास रहे हैं |

द्वितीयक तथ्य – इसमें उपलब्ध जनगणना आँकडें, चुनाव आयोग द्वारा प्रकाशित आम चुनाओं के परिणामो, सरकारी रिपोर्ट के साथ – साथ अध्ययन के लिये उपयोगी दैनिक, शैक्षिक एवं अनुसन्धान पत्रिकाओं व पुस्तकों की सहायता ली जाएगी |

निदर्शन – इस शोध कार्य में उद्देश्यपूर्ण या सविचार निदर्शन प्रणाली को अपनाते हुये अलवर जिले की कुल 14 में से 2 पंचायत समितियों (बहरोड़ एवं नीमराना) को निदर्शन के रूप में लिया गया है | अतः निदर्शन का आकार 14.29 प्रतिशत रहा है | जिसमे 2 पंचायत समितियों की महिला प्रधान एवं 31 ग्राम पंचायतों में कार्यरत महिला सरपंच, इस तरह कुल 33 महिला प्रतिनिधियों को शामिल किया गया है |

अध्ययन क्षेत्र परिचय -

यह अध्ययन अलवर जिला परिषद् के विशेष सन्दर्भ में रहा है | जो कि राजस्थान के उत्तर पूर्व में स्थित है | जिसकी सीमा हरियाणा के तीन जिलों पूर्व में नूँह, उत्तर में रेवाड़ी एवं उत्तर पश्चिम में महेन्द्रगढ जिले से लगती है | यह जिला राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 8 पर स्थित, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में शामिल और ओधोगिक क्षेत्र के रूप में अपनी विशेष पहचान रखता है | अलवर का क्षेत्रफल 8380

वर्ग किमी. है, जो कि सम्पूर्ण राजस्थान का लगभग 2.44 प्रतिशत क्षेत्र है | राजस्थान की कुल जनसंख्या का 5.36 प्रतिशत संख्या में 36,71,999 अलवर जिले में निवास करती है | साक्षरता दर के अनुसार 70.07 प्रतिशत के साथ सर्वाधिक साक्षर जिलों में कोटा, जयपुर, झुन्झूनू एवं सीकर के बाद पाँचवा स्थान है | अलवर जिले का लिंगानुपात 895 जो कि राजस्थान 928 से कम है | अलवर में पुरूष साक्षरता 83.7 प्रतिशत एवं महिला साक्षरता 56.3 प्रतिशत है | राजस्थान में 33 जिले हैं, जो कि सात संभागों में विभाजित किये गये है | जब पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से अलवर जिले को देखे, तो यह जयपुर सँभाग में शामिल है | जो न केवल जनसंख्या की दृष्टि से सबसे बडा, बल्कि सबसे अधिक साक्षर व अनुसूचित जातियों की जनसंख्या वाला सँभाग है | अलवर जिला परिषद में राजस्थान की कुल 295 पंचायत समितियों में से सर्वाधिक 14 पंचायत समितियां है | राजस्थान की कुल 9894 में से 512 ग्राम पंचायत अलवर जिला परिषद के अधीन आती है |

उपकल्पना -

1. महिला प्रतिनिधि पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था के कारण लोकतंत्र में अपनी भूमिका का निर्वहन सुचारू रूप से नहीं कर पा रही है |
2. महिलाओं की पारिवारिक व सामाजिक स्थिति भी भूमिका निर्वहन को प्रभावित करती है |
3. महिला प्रतिनिधियों की कार्यशैली पर रीति –रिवाज, परम्परा एवं संस्कृति का भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है |
4. महिलाएं स्वयं मनोवैज्ञानिक रूप से अधीनता की स्थिति से बाहर नहीं निकल पाई हैं, वे स्वयं भी पुरुष प्रभुत्व का विरोध नहीं करती हैं |

5. महिलाओं की आर्थिक अक्षमता भी उनकी भूमिका पर नकारात्मक प्रभाव छोड़ती है |

उद्देश्य -

i. पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को दिए पचास प्रतिशत आरक्षण के बाद महिला नेतृत्व की वास्तविक स्थति की पहचान करना |

ii. पंचायती राज में महिला प्रतिनिधियों के सामने उपस्थित चुनौतियों की पहचान करना |

iii. महिला नेतृत्व की कार्यशैली एवं निर्णय शक्ति को प्रभावित करने वाले कारकों की पहचान करना |

iv. पंचायती राज में महिला प्रतिनिधिओं के अनुभव, रूची, अभिवृति एवं जागरूकता का पता लगाना |

v. महिला नेतृत्व की उपलब्धियों व व्यावहारिक स्थिति एवं व्यवस्था में सुधारों की संभावनाओं पता लगाना |

vi. महिला प्रतिनिधिओं के पहलकारी प्रयासों को रोकने वाली प्रमुख बाधाओं की पहचान करना |

---

[1] *मनुस्मृति*, नवम अध्याय, पृष्ठ - 16.

[2] प्लेटो, *रिपब्लिक* .

[3] अरस्तू, *पॉलिटिक्स.*

[4] *मनुस्मृति*, नवम अध्याय, पृष्ठ – 15.

[5] कौटिल्य, *अर्थशास्त्र.*

[6] आर्य एस, मेनन एन, लोकनीता जे. (2015) *नारीवादी राजनीति संघर्ष एवं मुद्दे*, हिन्दी माध्यम का. नि., दि. वि. दिल्ली, पृ. -1.

[7] वही पृ. - 2.

[8] देसाई नीरा, ठक्कर ऊषा, (अनु.- सुभी घुसिया), (2015) *भारतीय समाज में महिलायें,* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, पृ.-1.

[9] मिल जे. एस. (1861) *कन्सीड्रेसन ऑन रिप्रजेंटेटीव गवर्नमेंट,* पृ. - 256.

[10] काश्यप डॉ. सुभाष (2011), *राजनीति कोश*, हिन्दी माध्यम कार्यान्वन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, पृ. - 110.

[11] मिश्र कृष्णकांत (2001), *राजनीतिक सिद्दांत और शासन मार्क्सवाद और उद्दरवाद,* ग्रन्थ शिल्पी (इं) प्रा. लि. दिल्ली पृ. – 307.

[12] रूसो जे.जे., *ए डिसकोर्सिस ऑन दी ओरिजन ऑफ़ अनइक्वलटी.*

[13] लास्की एच.जे. *ए ग्रामर आफ पोलिटिक्स* 153, 154.

[14] टाक्विले एलेक्सी , *डेमोक्रेसी इन अमेरिका.*

[15] शर्मा बृजकिशोर (2015) *भारत का संविधान एक परिचय,* पी. एच. आई. लर्निंग प्रा. लि. दिल्ली पृ. – 53.

[16] देसाई एन., ठक्कर ऊषा, (अनु.- सुभी घुसिया) (2015) *भारतीय समाज में महिलायें,* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, पृ.- 87.

[17] नागर पी. डी. (2013) *आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक चिंतन,* राजस्थान हि. ग्र. अकादमी, जयपुर, पृ. 55,57.

[18] महिपाल (2012) *ग्राम नियोजन*, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली, पृ.- 1, 2, 6.

[19] चौधरी बी. एन., कुमार युवराज (2013) *भारत में संवैधानिक लोकतंत्र और शासन* , पृ. – 234, 235.

[20] महिपाल (2004) *पंचायती राज*, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत.

[21] देसाई नीरा, ठक्कर ऊषा (2009) *भारतीय समाज में महिला,* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत.

[22] सिंह बैजनाथ (2009) *सामुदायिक ग्रामीण विकास,* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत.

[23] पाण्डेय पी.के. (2005) *गाँधी का आर्थिक व सामाजिक चिन्तन*, हिन्दी माध्यम कार्यान्वन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय.

[24] शर्मा अशोक (2011) *भारत में स्थानीय स्वशासन,* आर. बी. एस. ए. पब्लिशर्स जयपुर.

[25] व्यास, उपाध्याय, पुरोहित (2009), *भारतीय नारी : परिवर्तन एवं चुनौतियाँ,* राजस्थानी ग्रन्थासार सोजत गेट जोधपुर.

[26] मिश्र निंरजन, (2006) *भारत में पंचायती राज,* परिबोध पब्लिकेशन जयपुर.

[27] कौशिक आशा, (2004) *नारी सशक्तिकरणः विमर्श एवं यथार्थ*, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर,

[28] शर्मा रोमी, (2004) *नई दिशाएं भारतीय महिलाएँ,* प्रकाशन विभाग और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली,

[29] जोशी आर.पी., मंगलानी रूपा, (1998) *पंचायती राज के नवीन आयाम*, यूनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपुर,

[30] महिपाल (2015) *पंचायती राज चुनोतियां एवं संभावनाएं,* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली, पृ.- 65,128,129.